IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

शिक्षा में वेदों की प्रासंगिकता

डॉ राजेन्द्र प्रसाद

अग्रवाल कॉलेज आफ एजुकेशन

बल्लबगढ़ फरीदाबाद हरियाणा

सार - शिक्षा का प्रारंभ ही वेद से माना जाता है। मानव सभ्यता का इतिहास भी इसका साक्षी है। वेदों में भी शिक्षा के व्यापक स्वरूप का चिंतन पाया जाता है। इसीलिए शिक्षा को जीवन का अभिन्न अंग माना गया है। वेदों में ही मानव के लिए शिक्षा, संस्कृति और सभ्यता की बात कही गई है, चाहे वह **16** संस्कारों की बात को, सोलह श्रृंगार की बात हो, या चार पुरुषार्थों की बात क्यों ना हो। जैसा कि कहा भी गया है कि " येषां न विद्या न तपो न दानम् ,

ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्मः ।

ये मर्त्यलोके भुविभारभूता ,

मनुष्य रूपेण मृगाश्चरन्ति ।।

अर्थात जिसके पास विद्या, तप, ज्ञान,शील,गुण, और धर्म में से कुछ भी नहीं है वह मनुष्य ऐसा जीवन व्यतीत करता है जैसे जंगल में इधर-उधर भटकता हुआ मृग।

ब्रम्हचर्य सूक्त में कहा गया है कि विद्या (शिक्षा) ही जीवन के दुष्कर्म या दुर्गुणों को दूर कर सकती है।

इसीलिए शिक्षा देने वाले आचार्य (शिक्षक) को मृत्यु नाम से भी संबोधित किया गया है। वेदों में तो शिक्षा, शिक्षक तथा शिक्षार्थी को विद्याचार्य और ब्रह्मचारी आदि संज्ञाओं से संबोधित किया जाता था। जैसा कि हम सभी जानते भी हैं कि मानव जीवन के अनुमानित सौ वर्षों के जीवन को **25 -25** के चार भागों में विभक्त किया गया था, जिसमें ब्रम्हचर्य,गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास थे। इनमें पहला विद्यार्थी जीवन अर्थात शिक्षा से ही संबंधित था।

अथर्ववेद के एक मंत्र में ब्रह्मचर्य के लिए शारीरिक शिक्षा गोरक्षक अर्थात चिकित्सा शास्त्र के नियमों के ज्ञान की जानकारी को आवश्यक किए जाने की बात कही गई है, जिससे कि आधि- व्याधि तथा आकस्मिक मृत्यु से बचा जा सके।

वेदों के अनुसार शिक्षा के उद्देश्यों में बुद्धि की तीक्ष्णता, व्यक्ति की उन्नति और महान सौभाग्य का प्रबोध समाहित होना चाहिए। संकुचित रूप में देखा जाए तो शिक्षा स्वरों और व्यंजनों के सही प्रकार से उच्चारण व प्रकार आदि का रूप है।

शिक्षा और विज्ञान

शिक्ष को को ऊपर वर्णित किया जा चुका है। अगर विज्ञान की बात करें तो इसको इस रूप में समझा जाता है विज्ञान=वि+ज्ञान। अर्थात वि- विशेष तथा ज्ञान यानी विशेष ज्ञान। लेकिन वर्तमान समय में इसे एक भौतिक ज्ञान अर्थात प्रौद्योगिकी (तकनीकी) के रूप में जाना जाता है। और इन दोनों तकनीकी प्रविधि और भौतिक विज्ञान को शिक्षा के अनिवार्य अंग के रूप में स्वीकार किया गया है।

वैदिक शिक्षा में विज्ञान के स्थान को समझाते हुए वेदर्षि महर्षि दयानंद जी लिखते हैं " अथर्ववेद जिसको शिल्प विद्या कहते हैं उसको पदार्थ, गुण, विज्ञान, क्रिया कौशल, नानाविध पदार्थों का निर्माण पृथ्वी से लेकर आकाश पर्यन्त की विद्या को यथावत सीखना चाहिए। इनके अनुसार वेद ही विज्ञान का मूल हैं और यही शिक्षा का लक्ष्य है। अथर्ववेद मैं ब्रह्मचारी अर्थात विद्यार्थी को अग्नि, सूर्य, बिजली, जल तथा प्राणिविज्ञान का ज्ञान प्राप्त कर एक विद्वान के रूप में माना गया है।

इसी सूक्त में कहा गया है कि- आचार्य और विद्यार्थी विद्या प्राप्त करके संसार के पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश और वायु आदि के ज्ञान को प्राप्त कर उन्हें उपयोगी बनाते हैं। विद्यार्थी इसी ज्ञानार्जन से मानव जीवन को तथा समस्त प्राणियों के जीवन को संबंधित करते हुए उनके जीवन को सरल,सफल और सुखमय बनाता है।

वैदिक शिक्षा में विज्ञान को महत्वपूर्ण बताते हुए कहा गया है कि जिस प्रकार दूध ना देने वाली गाय को साथ लेकर घूमने से कोई फायदा नहीं होता उसी प्रकार प्रयोग में ना आने वाली क्रियाहीन अनुपयोगी विद्या (शिक्षा) को प्राप्त करने का कोई फायदा नहीं है। यह कथन आज भी चरितार्थ हो रहा है क्योंकि अगर वर्तमान परिदृश्य पर नजर डालें तो सबसे ज्यादा शिक्षित बेरोजगारी प्रमुखता से पाई जा रही है।

विषय चयन की स्वतंत्रता

वैदिक शिक्षा प्रक्रिया में विद्यार्थी को विषय चयन की स्वतंत्रता थी। अथर्ववेद के ब्रम्हचर्य सूक्त से पता चलता है कि विद्यार्थियों के लिए विविध विषयों तथा विषय विशेषज्ञों द्वारा शिक्षण की व्यवस्था थी। विद्यार्थी के लिए जहां एक ओर विज्ञान व तकनीकी को अनिवार्य बताया गया वहीं दूसरी ओर दार्शनिक विचारों और स्वेच्छा से राजनीति आदि विषयों के अध्ययन की भी स्वतंत्रता थी।

वैदिक शिक्षा में चयन के लिए वर्णी शब्द का प्रयोग होता था। आचार्य यास्क ने लिखा है ' वर्णो वृणोते:' अर्थात विद्यार्थी अपने वर्ण का चयन स्वयं करें और उसी के अनुसार ही उसकी शिक्षा-दीक्षा होती थी जैसे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। जन्म से इनका कोई संबंध है नहीं होता था। शिक्षा प्रक्रिया में इन्हें इस रूप में परिभाषित किया जाता था। प्रथम ज्ञान को जीवन का लक्ष्य बनाने वाले ब्राह्मण,द्वितीय अन्याय के विरुद्ध लड़ने वाले क्षत्रिय, तृतीय धन संपदा से राष्ट्र की सेवा में रत वैश्य और सभी की सेवा करने वाले शूद्र कहे जाते थे। वैदिक विद्वान पंडित बुद्धदेव विद्यालंकार ने कहा है कि-" समाज के तीन शत्रु हैं -अज्ञान, अन्याय और अभाव।" यह सभी उपरोक्त वर्ण इन्हीं शत्रुओं से लड़ने की तैयारी करते थे। जैसा कि आज की शिक्षा प्रक्रिया में भी हो रहा है कि विद्यार्थी एक निश्चित लक्ष्य का निर्धारण करके अपने विषय का चयन करने के लिए स्वतंत्र है। जिससे उसकी व्यक्तिगत अंतर्निहित शक्तियों का विकास हो कर उसका जीवन सफल सरल और सुखमय बन सके। वह एक सफल व सुसभ्य नागरिक के रूप में राष्ट्र की सेवा कर सके।

अथर्ववेद में व्यवसायपरक शिक्षा के विषय में विधिवत चर्चा की गई है। जिसके अंतर्गत यंत्र, कला, नौकायन, विमान के निर्माण, कृषि, मार्ग निर्माण, जल स्रोतों के अन्वेषण तथा पर्वतों को उपजाऊ बनाने आदि को भी पाठ्यक्रम में शामिल किया गया था। आयुर्वेद व चिकित्सा शास्त्र का अध्ययन जड़ी बूटियों आदि द्वारा आवश्यकतानुसार उपचार लेकर रोग से मुक्ति पाकर स्वस्थ व ताकतवर रहने का निर्देश मिलता है।

आज भी रोजगार परक शिक्षा पर विशेष जोर दिया जा रहा है चाहे वह विभिन्न प्रकार के औद्योगिक क्षेत्रों की बात करें या सामान्य शिक्षा के साथ ही कृषि, क्राफ्ट, सिलाई, कढ़ाई -बुनाई तथा कंप्यूटर आदि की शिक्षा अनिवार्य कर दी गई है। आज तो कौशल विकास के अंतर्गत बड़े-बड़े विश्वविद्यालय भी स्थापित किए गए हैं। साथ ही योग शिक्षा का ज्ञान छोटी कक्षाओं से लेकर बड़ी कक्षाओं तक प्रमुखता से पाठ्यक्रम में जोड़ा गया है।

शिक्षण विधि

वैदिक शिक्षा में शिक्षण प्रक्रिया को सहज वह सफल बनाने पर जोर दिया गया था। आचार्य (शिक्षक) की क्रियाओं और उनके निरीक्षण तथा उनके सानिध्य से ज्ञान अर्जन की बात की जाती थी जैसे कहा गया है -

"उपहूतो वाचस्पतिरूपास्मान् वाचस्वति ईयताम्।
सं श्रुतेन गमेमहि मा श्रुतेन विराधिषि।।

अर्थात विद्यार्थी आचार्य के पास रहे आचार्य विद्यार्थी के पास रहे और सुनी हुए ज्ञान के साथ विद्यार्थी का संयोग रहे वियोग कभी ना हो। जैसा कि कहा जाता है कि किसी भी विषय वस्तु का अध्ययन फिर मनन फिर चिंतन और निदिद्ध्यासन बहुत ही आवश्यक है। इस प्रक्रिया के पश्चात कोई भी विषय वस्तु स्वत: स्थाई हो जाती है।

वेदों में विद्यालय को शिक्षक यानी आचार्य का का गर्भ गृह कहा गया है जिस को पूरी तरह से सुरक्षित व संरक्षित रखते हुए शिक्षक अपने विद्यार्थी का समुचित रूप से शारीरिक व मानसिक पोषण दे सकें। क्योंकि ऐसे ज्ञान के लिए तो देव भी लालायित रहते हैं। वेदों में वर्णित है कि विद्यालय प्रांगण सुरम्य व प्राकृतिक तथा शांत होना चाहिए, अर्थात बस्ती व कोलाहल से बिल्कुल हटकर प्राकृतिक छटाओं के मध्य स्थित होना चाहिए।

वेदों में खेल विधि व क्रियाविधि आदि शिक्षण सूत्र मिलते हैं जो कि आज भी प्रासंगिक हैं चाहे वह किंडर गार्डन, मांटेसरी तथा खेल विधि आदि कोई भी क्यों ना हों।

ऋग्वेद में शिक्षण सूत्रों की बात करते हुई है कहा भी गया है कि - "एक सी आंखों वाले तथा एक से कानों वाले यहां तक की एक साथ एक मां के गर्भ से जन्म लेने वाले सहपाठी यानी छात्र मनोवेग तथा क्षमता आदि में भिन्न होते हैं। इनमें कुछ कुशाग्र कुछ सामान्य तथा कुछ मंदबुध्दि के अधिगमकर्ता होते हैं। अतः स्पष्ट है कि प्रत्येक छात्र अपनी रुचि, क्षमता और एकाग्रता आदि गुणों में दूसरों से भिन्न होता है।

इसलिए शिक्षक को प्रत्येक छात्र की वैयक्तिक रुचि, क्षमता और योग्यता आदि को ध्यान में रखते हुए अपना शिक्षण कार्य करना चाहिए। जिसके लिए वर्तमान समय में प्रत्येक शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम के पाठ्यक्रमों में मनोविज्ञान को किसी न किसी रूप में अनिवार्य कर दिया गया है।

वेदों में यौन शिक्षा के सूत्र भी मिलते हैं, जो कि मानव जीवन के लिए अत्यंत उपयोगी हैं विशेषकर किशोर बालक व बालिकाओं के लिए। आज के बदलते परिवेश में पाश्चात्य संस्कृति और आधुनिकीकरण यानी तकनीकी युग होने के कारण इसकी शिक्षा बहुत ही आवश्यक है क्योंकि इसके ज्ञान से व्यक्ति को शारीरिक व मानसिक दोनों रूपों में रोगों से बड़ी सरलता से बचा जा सकता है। अथर्ववेद में तो यौन क्रिया को पति-पत्नी के लिए बल व प्रीति का आधार बताया गया है।

इस प्रकार वेदों में वर्णित शिक्षा पद्धति व्यक्ति व समाज के हितों की एक तरह से संरक्षिका सिद्ध होती है। क्योंकि इसमें ना केवल आधुनिकतम शिक्षण सिद्धांतों को अपनाया गया है बल्कि विभिन्न पहलुओं पर व्यापक व परिष्कृत विचार भी पाए जाते हैं। वेदों से संबंधित शिक्षण मूल्यों को अपनाकर हम वर्तमान की समस्त समस्याओं का समाधान प्राप्त कर सकते हैं।

संदर्भ

अथर्ववेद।
ऋग्वेद।
अथर्ववेदीय ब्रम्हचर्य सूक्त।
ब्रह्म,तपोज्ञानं वा चरति अर्जयति तच्छीलो वा ब्रह्मचारी - अमरकोश।
कायाकल्प, बुद्धदेव विद्यालंकार।